स्व. श्री परमानन्द गिरधर

अन्तिम प्रयास.....

डेरा प्रेम सभा

(गीता भवन मन्दिर)

साधकों के मूल आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर

–स्वामी शान्तानन्द पुरी

अनुवादक :

S.B. GUPTA

साधकों के मूल आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर

—स्वामी शान्तानन्द पुरी

प्रस्तुतकर्ता
श्री अमरनाथ गुलाटी

डेरा प्रेम सभा
(गीता भवन मन्दिर)
भाई परमानन्द कालोनी, दिल्ली-110009
फोन : 27442038

डेरा प्रेम सभा

(गीता भवन मन्दिर)

भाई परमानन्द कालोनी

दिल्ली-110009

इस पुस्तिका का हिन्दी अनुवाद श्री एस. बी. गुप्ता भूतपूर्व प्रधानाचार्य शिक्षा निदेशालय दिल्ली के द्वारा सम्पन्न हुआ। सरल एवं सुबोध शैली में अनुवाद कार्य के लिए **श्री एस. बी. गुप्ता जी** एवं मुख्य प्रेरणा स्त्रोत **श्री अमरनाथ गुलाटी जी** का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

मूलभूत आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर

— स्वामी शान्तानन्द पुरी

ॐ श्री गणेशाय नमः

प्रश्न 1. किस प्रतीक या भगवान पर हमें ध्यान लगाना चाहिए ? या पूजा के लिए हमें किस भगवान को चुनना चाहिए ?

उत्तर : अंततः ईश्वर सिर्फ एक है जो सब की आत्मा है और निराकार है। उसकी शक्तियाँ अनन्त हैं। वह किसी भी रूप को ग्रहण कर सकता है (जैसे— राम, कृष्ण, शिव, ईसा मसीह इत्यादि) जिस पर श्रद्धालु अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। ईश्वर के ये रूप उतने ही सच्चे हैं जितना कि स्वयं खोज कर्ता। गुरु इस बात को चुनने का सबसे अच्छा निर्णायक होता है कि हमें किस भगवान के ऊपर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, जो आपकी बीती हुई स्थिति और आध्यात्मिक संरचना पर निर्भर करती है। जिस भी साकार (या निराकार) रूप की आप पूजा करते हैं वह आपका स्वयं का है और वह सर्वश्रेष्ठ असीमित ईश्वर है जो ईश्वर के अनेक रूपों में प्रकट होता है। चुनाव का सामान्य सूत्र निम्न रूपों में दिया जा सकता है—

(1) स्वयं (आत्मा) या सर्वश्रेष्ठ चेतना वाले लोग

(2) एक अनन्त ईश्वर जो आकृतिहीन और निर्गुण (निराकार और निर्गुण)

(3) एक सर्वश्रेष्ठ निराकार ईश्वर जिसमें प्रेम, दयालुता, सहानुभूति इत्यादि होती है (जैसे कि क्रिश्चियन धर्म में) (निराकार लेकिन सगुण)।

(4) कोई भी ईश्वर जो साकार है (शिव, विष्णु इत्यादि) और इसमें सभी गुण, स्वयं अपनी पसंद के अनुसार हैं।

इन सब में से कोई भी एक अंततः ईश्वरीय आत्मज्ञान की ओर ले जाएगा।

प्रश्न 2. आत्मज्ञान (आत्म साक्षात्कार), ईश्वरीय अनुभूति और मुक्ति या मोक्ष क्या है ?

उत्तर : इनमें तनिक भी कोई अंतर नहीं है। ये सभी विभिन्न पारिभाषिक शब्द एक ही बात और एक ही अनुभव की ओर संकेत करते हैं। आत्मा या ईश्वर को जानकर, कोई भी अज्ञान को समाप्त कर सकता है जो इस संसार में किसी पीड़ा, और दुःख का कारण है और इससे व्यक्ति निरंतर आनंद में रहता है। यह स्थिति मुक्ति या मोक्ष कहलाती है। मुक्ति की परिभाषा और प्रतिबोध भिन्न–भिन्न धर्मों और दर्शन शास्त्रों (जैसे— जैन धर्म, बौद्ध धर्म इत्यादि) में भिन्न–भिन्न है।

प्रश्न 3. अज्ञानता क्या है और यह किस प्रकार दुःख, पीड़ा, मानसिक शान्ति की कमी, इत्यादि का कारण बनती है। हम इसे किस प्रकार दूर कर सकते हैं ?

उत्तर : पूर्व वासनाओं या संस्कारों के कारण, प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर तथा मन से ही तादात्म्य भाव रखता है। यद्यपि वह स्वयं समय, स्थान, पदार्थ, कारण–कार्य आदि सीमाओं से विरहित आनंद स्वरूप की अमर परम चेतना है, जो शरीर से सीमित नहीं है, वह स्वयं पर शक्ति की सीमाएं और विशेषताएँ आरोपित कर लेता है जैसे मृत्यु, वार्धक्य, दुःख, दूसरों से संबंध आदि और स्वयं दुःखी हो जाता है। शरीर से गलत तादात्म्य की यह स्थिति अज्ञानता कहलाती है। स्वयं को सही रूप में जानकर कि हम सचमुच में क्या हैं हम अज्ञानता को दूर करते हैं।

उदाहरणस्वरूप, एक कमरे में जहाँ भिन्न प्रकार के बल्ब भिन्न–भिन्न वोल्टेज के हैं– शून्य वाट, साठ वाट, 200 वाट और 1000 वाट। बल्ब रंग, उम्र और क्षमता में भिन्न हैं और टूट फूट (मृत्यु) सकते हैं। लेकिन इन सभी बल्बों का पोषण सिर्फ विद्युत ऊर्जा से होता है जो एक तार से आती है लेकिन प्रत्येक बल्ब की विभिन्न स्थितियों (क्षमता) के कारण यह कम या ज्यादा प्रदर्शित होता है। यह केवल एक ही लगातार विद्युत ऊर्जा है जो सभी बल्बों को संचालित करती है। यदि प्रत्येक बल्ब में बिजली जो अनश्वर है खुद बल्ब से तादाम्य करती है और प्रत्येक को एक दूसरे से अलग मानती है, तो शून्य वाट का बल्ब 1000 वाट के बल्ब के प्रति ईष्यालु होगा, पुराना बल्ब नए बल्ब को नापसंद करेगा, वे सभी सोचेंगे कि वे उसी दिन समाप्त हो जायेंगे जिस दिन यह बल्ब टूटेगा या फ्यूज होगा और देशी निर्मित बल्ब बाहरी निर्मित बल्ब को नापसंद करेगा। इस प्रकार, सही स्वरूप की अनभिज्ञता के परिणाम बल्ब में बिजली दुःख और चिन्ताओं के बीच गुजरती है। मनुष्य का उसके शरीर से संबंध भी इसी प्रकार का है।

ईश्वर के ऊपर ध्यान लगाना अज्ञानता को दूर करने का सबसे लाभदायक उपाय है।

प्रश्न 4. क्या गुरु आवश्यक है ? क्या हम इस मार्ग पर किताब इत्यादि की मदद से आगे नहीं बढ़ सकते हैं ?

उत्तर : जब यह प्रश्न रमण महर्षि से पूछा गया तो उन्होंने व्यंग्य करते हुए कहा– "क्या एक बच्चे के लिए माँ आवश्यक है ?" उन्होंने खुद इस तरह से इसे स्पष्ट किया :

वास्तविक गुरु ईश्वर है या स्वयं आपका आत्मा, जो हृदय में निवास करता है। विकास के क्रम में कुछ ऊँचे स्थान वाले अभिलाषियों को छोड़कर (जिनके गुरु उनके पिछले जन्मों में भी रह चुके हों), अधिकतर जिज्ञासु आंतरिक गुरु (आत्मा) की मदद लेने में समर्थ नहीं होंगे। इसलिए ईश्वर, प्यारे भक्तों पर अपनी दया करते हैं और खुद को भक्तों की स्थितियों के अनुसार गुरु के रूप में अवतरित होते हैं। यद्यपि बाहरी गुरु ईश्वर या ईश्वर का अवतार है जो हमारे भीतर से कार्य करता

है, भक्त सोचता है कि वह एक मनुष्य है। प्रत्येक मनुष्य के विभिन्न संस्कार होते हैं और साधना के लिए और मार्ग दर्शन के लिए उन्हें विभिन्न तरीके और मार्ग दर्शन की जरूरत होती है जो एक पुस्तक नहीं दे सकती। इसके विपरीत पुस्तकें या ग्रंथ जिनमें यदि वास्तविक अनुभव के आधार पर उचित रूप में व्याख्या नहीं की गई है तो अव्यवस्था और गड़बड़ी पैदा कर सकते हैं।

प्रश्न 5. मैं एक योग्य गुरु कैसे पाऊँगा जो हमारा मार्ग दर्शन करेगा ? क्या मैं अपना गुरु बदल सकता हूँ यदि प्रथम गुरु की मृत्यु हो जाती है या मुझे एक अधिक प्रतिभाशाली और मान्य गुरु प्राप्त हो जाए ? यदि मैं पाता हूँ कि मेरा गुरु पाखंडी है या बदमाश जो कामवासना और कपट में लिप्त है तो क्या मैं उसे छोड़ सकता हूँ ?

उत्तर : जब हम अपने आप को भगवान की भक्ति में ज्वालामुखी की तरह लिप्त करते हैं और भगवान से एक गुरु प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं, तब हम निश्चित रूप से एक उचित गुरु पा लेंगे। इसके अतिरिक्त हम सत्संग के लिए जा सकते हैं और महात्माओं में ढूँढ सकते हैं कि क्या कोई वेद–वेदान्त शास्त्रों में निष्णात पूर्ण ज्ञाता है, जो कि इच्छाविहीन है और जिसके पास अहम् का अभाव है, विनम्र है, और जो धन, कामवासना, नाम और इज्जत से दूर भागता है और आदि शंकर द्वारा रचित विवेक चूडामणि में वर्णित लक्षणयुक्त तथा समत्वभाव सहित हो जब हमारा ईश्वर से प्रेम गहरा हो जाता है तो गुरु हमारी जिन्दगी में अवश्य आएगा।

सचमुच में बाह्य रूप में सद्गुरु स्वयं आत्मा है। बाह्य गुरु का शरीर ना रहने पर भी दिशा–निर्देश लगातार आते रहेंगे। कोई भी गुरु ज्यादा लंबे समय तक नहीं रह सकता है जितना कि हम रह सकते हैं।

एक बार चुना हुआ गुरु सचमुच में ईश्वर का अवतार होता है और वह मानव शरीर नहीं है इसलिए उसे छोड़ने का कोई कारण नहीं है। यदि वह एक खराब व्यक्ति के रूप में भी परिवर्तित हो जाता है, तो जितने लंबे समय तक उसने तुम्हें मार्ग दिखाया है या मंत्र दिया है जिसे धार्मिक ग्रंथों से लिया गया है, आप लगातार उसके निर्दिष्ट रास्ते पर जा सकते हैं और सभी निर्देश तुम्हारे अंदर से आएंगे। आगे, यह कहा गया है कि वही गुरु मिलता है जिसका वह सच्चा हकदार होता है। यदि गुरु एक पापी मनुष्य है, तो संभवतः वह नरक में जाएगा लेकिन उसके शिष्य को इसके बारे में चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।

प्रश्न 6. मेरा कुछ धूमिल झुकाव ईश्वर के प्रति है। यह सब थोड़ा-थोड़ा है। मेरा झुकाव धार्मिक या आध्यात्मिक किताबों को पढ़ने के प्रति नहीं हैं क्योंकि मैं उन्हें भ्रामक और विरोधाभासी पाता हूँ। मुझे किस प्रकार आगे बढ़ना चाहिए ?

उत्तर : आपको ईश्वर के प्रति गहरा लगाव बढ़ाना है जबतक कि यह आपके लिए कष्टकारी न हो जाए। उस उद्देश्य के लिए आपको सत्संग में जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, उभरते हुए महात्माओं की संगति करो जो आध्यात्मिक एवं ऊँचे स्तर के भक्त हो सकते हैं। सत्संग भजन के रूप में भी हो सकता है, नाम स्मरण करने में (भगवान का जोर–जोर से नाम लेने में) आध्यात्मिक प्रश्नोत्तर, प्रश्नों और उत्तरों इत्यादि के रूप में भी हो सकता है और कभी महात्मा पूर्ण मौन रूप में बैठा हुआ हो सकता है जो मौन रहकर अपनी तरंगें प्रसारित करता है। यदि तुम एक अच्छी संगति नहीं पाते हो, तो तुम सर्वसंमत संतों की किताबों को पढ़ सकते हो (उनकी बातों और धार्मिक उपदेशों को, लेकिन शिष्यों द्वारा रचित किताबों को नहीं) जैसे रामकृष्ण परमहंस, भगवान रमण, योगी अरविन्द, माँ आनन्दमयी इत्यादि की किताबों को जिनमें उनकी आत्मकथाएँ शामिल हों, प्राचीन काल के भक्तों– कबीरदास, तुलसीदास और मीरा से संबंधित किताबें भक्त विजयम् और श्रीमद् भागवत् और तुलसीदास की रामचरितमानस इत्यादि। इन्हें भी सत्संग के रूप में माना जाएगा। तुम्हारे बचे हुए समय में, तुम कुछ सामाजिक सेवा भी कर सकते हो जैसे अंधों की मदद करना, अस्पतालों और वृद्धाश्रमों में पुराने रोगियों, और गंदी बस्तियों के बच्चों के लिए कपड़ों और रोटियों का वितरण करना आदि। यह हृदय को शुद्ध करेगा जिससे कि आने वाले समय में तुम्हारा आगे का रास्ता साफ होगा।

प्रश्न 7. हमें भगवान की जरूरत क्यों पड़ती है ? वह कहाँ निवास करता है ? हम उसे कैसे पा सकते हैं ?

उत्तर : हर कोई अपनी जिन्दगी में असीमित सुख चाहता है और सभी दुःख, दर्द और बाधाओं को अपनी जिन्दगी से दूर करना चाहता है। ईश्वर एक सुपर बाजार है जहाँ केवल वास्तविक आनन्द पा सकते हैं।

जैसा कि हमने बताया है, ये सभी दुःख इत्यादि स्वयं को पूर्ण रूप से नहीं जानने का परिणाम हैं अर्थात् वास्तव में हम कौन हैं। आत्मा ही हमारे आनन्द की कुंजी है और उसी आत्मा को भगवान कहते हैं। शरीर से हमारी गलत पहचान के कारण, एक सामान्य आदमी को आसानी से आश्वस्त नहीं किया जा सकता है कि वह अमर अनन्त आत्मा है, वह सत् है, जो परमानंद है जबकि वह बुढ़ापे, रोग, मृत्यु और दुःखों को अपने प्रत्येक दिन की जिन्दगी में देखता है। इसलिए, आत्मा को उस भगवान के रूप में समझा गया है जो कि किसी अदृश्य दैवीय क्षेत्रों में निवास करता है, हमारी मदद करेगा और हमें दुःखों से छुटकारा दिलाएगा। जो उसके बारे में नहीं सोच सकते हैं और अपने आत्मा की खोज नहीं करते और जो संसार को स्वयं से अलग मानते हैं उन्हें ईश्वर का सहारा लेना पड़ता है जो विश्व का नियंत्रक और संरक्षक है (जैसे प्रत्येक तंत्र जो कि संगठित रूप में कार्य करता है उसका एक नियंत्रक होता है)। यह सर्वशक्तिमान और सर्वव्याप्त आत्मा है जो स्वयं को एक

ईश्वर के रूप में कल्पना कर रहा है, आत्मा में भक्तों द्वारा कल्पित रूपों को धारण करने का सामर्थ्य है। अंततः ईश्वर की खोज करता हुआ मानव अपने आत्मा की ही खोज करता है और ईश्वर अनुभूति प्राप्त करता है।

साकार तथा सगुण भगवान को निम्न स्तर के अज्ञानियों के लिए निर्मित कोई विशेष सुविधा नहीं समझना चाहिए क्योंकि अंततः वह साकार ईश्वर भी उतना ही सच है जितना निराकार भगवान है। रामकृष्ण के अनुसार, वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

कैलाश या वैकुण्ठ जैसे क्षेत्र जहाँ माना जाता है कि व्यक्तिगत भगवान निवास करते हैं उतने ही सत्य हैं जितनी यह दुनिया है और चेतना की विभिन्न स्तरों में नयनगोचर हो जाते हैं।

ईश्वर या आत्मा को प्राप्त करने के लिए अनन्त मार्ग हैं। साधना, प्रार्थना, भक्ति और स्वयं का अवलोकन करना, ईश्वर को समझने के कुछ सामान्य तरीके हैं।

प्रश्न 8. साधना क्या है और यह प्रार्थना से किस प्रकार भिन्न है ? हमें किस प्रकार साधना करनी चाहिए ?

उत्तर : एक महात्मा के अनुसार, जब आप ईश्वर से बात करते हैं और वह सुनता है, तो यह प्रार्थना कहलाती है। जब वह बात करता है और शांतिपूर्वक ढंग से आप सुनते हैं तो, यह ध्यान है। उपनिषद् के शांति मंत्र और पुराण के विभिन्न स्तोत्र और आदि शंकर जैसे महान संतों के द्वारा तैयार की गई विभिन्न प्रकार की बनी बनायी प्रार्थनाएँ भी हैं। कोई भी ईश्वर से बात कर सकता है और अपने शब्दों में प्रार्थना तथा प्रशंसात्मक गुणगान कर सकता है।

विभिन्न गुरुओं ने ध्यान को भिन्न–भिन्न प्रकारों में परिभाषित किया है। लगातार किसी एक वस्तु पर अपना ध्यान केन्द्रित करने पर, जैसे कि ईश्वर पर और उस विचार पर लगातार बिना किसी बाधा के कायम रहने की क्रिया को संस्कृत में ध्यान कहा गया है। यह आंतरिक चेतना की तीव्रता को जगाने की विधि है जिससे कि वह पूर्णतया परब्रह्म में लीन हो जाए। ध्यान करने के बहुत से प्रचलित तरीके हैं, जो कि आधुनिक विद्वानों द्वारा अपनाए गए तरीकों के अतिरिक्त हैं। यहाँ तक कि जप और सच्ची प्रार्थनाएँ हैं जिन्हें भावुकता के साथ किया जाए तो वे ध्यान की ओर ले जाती हैं और अंततः समाधि प्राप्त होती है। एक संकेत जैसे कि "ओम" को लेकर उसकी ध्वनि पर कोई भी अपना ध्यान एकाग्रचित्त से कर सकता है। कोई भी अपने प्रिय ईश्वर के रूप की कल्पना करके उसके शरीर के प्रत्येक भाग नख से लेकर ईश्वर उनके सिर तक अपना ध्यान लगा सकता है। उनके पूर्णरूप की कल्पना कर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकता है। पूरे विश्व के रूप में ईश्वर पर ध्यान केन्द्रित करने के तरीके हैं (सूर्य और चंद्रमा उनकी आँखें हैं इत्यादि) इसे

विश्वरूप ध्यान कहा जाता है। गुरु को ही आपके लिए उपयुक्त साधना या ध्यान की विधि निर्दिष्ट करनी चाहिए।

प्रश्न 9. दीक्षा या दीक्षा संस्कार क्या है ? यह किस प्रकार मदद करती है ?

उत्तर : परम्परागत तरीके से, जब एक आकांक्षी प्रार्थी गुरु से निवेदन करता है, तो गुरु उसे मंत्र देते हैं जो कि प्रार्थी के (इष्ट) देवता या व्यक्तिगत भगवान इत्यादि से संबंधित होता है। यह प्रक्रिया दीक्षा या दीक्षा संस्कार कहलाती है। इस प्रक्रिया में अति सूक्ष्म शक्ति का हस्तांतरण शिष्य को किया जाता है और मंत्र एक ऐसा माध्यम बन जाता है जिससे गुरु उसके आध्यात्मिक कल्याण की देखभाल करना शुरु कर देता है। सत्य कहें तो यदि भक्त लगातार जप करता है (मंत्रोच्चारण), तो उसकी अपनी सोयी हुई आध्यात्मिक शक्ति जागृत होना शुरू हो जाती है। दीक्षा के कई अन्य प्रकार हैं जो आँख, स्पर्श इत्यादि के द्वारा दी जाती है।

प्रश्न 10. वास्तविक रूप में मंत्र क्या है और इसका जप किस प्रकार किया जाता है ? यह आध्यात्मिक विकास में किस प्रकार मदद करता है ?

उत्तर : प्राचीन काल के ऋषि-महर्षि, ईश्वरीय प्रेरणा से अत्यधिक साधना, और चित्तशुद्धि के बाद, कुछ मंत्रों का स्फुरण अपने मन में होता था, जिनका प्रयोग करते थे (जैसे ॐ नमः शिवाय)। वे सुबह से लेकर शाम तक मंत्रोच्चारण करते थे। वे उन पर अपना ध्यान पूर्णतया केन्द्रित रखते थे और मंत्रों को नाद ऊर्जा के रूप में ईश्वर का ही रूप समझते थे और अंत में आत्मज्ञान प्राप्त करते थे। इन मंत्रों को एक गूढ रहस्य के रूप में स्वीकार किया गया है और ये शास्त्रों में समायोजित है (जैसे मंत्र महोदधि) जो मंत्र शास्त्र का एक भाग है (मंत्रों से संबंधित शास्त्र), तंत्र शास्त्र और पुराणों में भी है। प्रत्येक मंत्र को कुछ निश्चित संस्कारों जैसे अंगन्यास, करन्यास, ऋषि का नाम, छन्द, देवता इत्यादि के साथ मंत्रोच्चारण करके अपना शुद्धीकरण किया जाता है। ये मंत्र तभी प्रभावी होते हैं जब ये गुरु के मुख से प्रसारित होते हैं और इन्हें किताबों को पढ़कर प्रभावी नहीं किया जा सकता है। लगातार जप ध्यान की ओर ले जाता है, मनोनाश और यहाँ तक कि समाधि की स्थिति तक पहुँचाता है जिसका परिणाम ईश्वर अनुभूति है।

जप के लिए, क्रिश्चियन धर्म को मानने वाले कुछ लोग इस विधि से करते हैं, "प्रभु ईसा मसीह, आप हम लोगों, पर दया करें", इसे एक मंत्र के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसी प्रकार, गुरु नानक की वाणी "जप जी" को कुछ लोग मंत्र के रूप में उपयोग करते हैं। यदि इसे आस्था के साथ किया जाता है, तो यह बहुत प्रभावी सिद्ध होता है।

मंत्र के प्रत्येक वर्ण से, एक विशेष प्रकार की ऊर्जा निकलती है जो एक विशेष प्रकार की वासना को दूर करती है और चित्त को शुद्ध करती है। उदाहरण के लिए,

क्लीम् (कुछ लोग इसे क्लींग उच्चारण करते हैं) कामबीज कहलाता है और यह सभी उचित इच्छाओं को पूरा करता है और अंत में इच्छारूपी सारी वासनाओं का विनाश करता है जिसमें यौन संबंधी वासनाएँ और लालसाएँ भी शामिल होती हैं।

आधुनिक युग में, बहुत सारे आश्रम (सामान्यतया गुरु की मृत्यु के बाद) संबंधित गुरुओं के नाम पर नए मंत्रों का आविष्कार करते हैं जिनके द्वारा शिष्यों को दीक्षा दी जाती है। बहुत से गुरु ऐसे हैं जो मंत्र शास्त्रों से परिचित नहीं हैं लेकिन कुछ मंत्र वे स्वयं बनाते हैं (शब्दों का अशुद्ध और गलत उच्चारण से) या आम दुकानों में प्रचलित सस्ती किताबों से लेते हैं जिनमें कुछ मंत्र रहते हैं (कुछ सही और कुछ स्वयं निर्मित) और इनमें व्याकरण संबंधी बहुत सारी अशुद्धियाँ भी होती हैं।

जप करने की प्रक्रिया के विभिन्न नियम हैं जिन्हें गुरु दीक्षा देने के समय प्रकट करते हैं या बताते हैं।

प्रश्न 11. "नाम स्मरण" क्या है ?

उत्तर : ईश्वर का लगातार स्मरण करना ही ईश्वर को प्राप्त करने की कुंजी है। सभी लोग बिना जाति, समुदाय या लिंग भेद के (इसमें वे भी सम्मिलित हैं जिन्हें गुरु के द्वारा दीक्षा नहीं दी गई है) भगवान के नाम का जप कर सकते हैं, जैसे– चुपचाप या जोर से बोलकर।

(1) राम

(2) हरे कृष्णा हरे कृष्णा कृष्णा कृष्णा हरे हरे

(3) हरि ओम्

(4) श्री राम जय राम जय जय राम

यह नाम स्मरण कहलाता है।

जप एक निश्चित नियमों के तहत किया जाता है और इसे कहीं भी और हर जगह नहीं किया जा सकता। बस में यात्रा करते समय ईश्वर का नाम ले सकते हैं और यहाँ तक कि शौचालय और स्नानागार में भी। वर्णों से शब्दों को बनाने वाले नामों में, दैवी शक्तियाँ होती हैं जो हमारी वासनाओं को दूर करने में मदद करती हैं और हमारी चेतना के स्तर को भी ऊँचा उठाती हैं। यदि श्रद्धा और अनन्य भक्ति से किया जाता है तो नामस्मरण को उतना ही प्रभावी माना जाता है जितना कि जप या ध्यान। यदि नाम जप भी लिया जाए, यदि इसे गुरु के द्वारा दिया जाता है, यह बहुत प्रभावी हो सकता है।

बहुत सारी धार्मिक पुस्तकें हैं जिनमें प्रत्येक ईश्वर के 108 या 300 या 1000 नाम दिए गए हैं। जैसे– शिव सहस्रनाम स्तोत्रम, ललिता त्रिशती, विष्णु सहस्र नाम स्तोत्रम् इत्यादि। ईश्वर के इन नामों का लगातार जप करने को भी नामस्मरण या

प्रार्थनाओं की श्रेणी में रखा जा सकता है। कुछ निश्चित स्तोत्र (मंत्रों) जैसे विष्णु सहस्र नाम, इनको भी जप के समान माना जाता है यदि इसे न्यास, शक्ति, कीलकम् इत्यादि के साथ किया जाए।

प्रश्न 12. प्रार्थना क्या है ?

उत्तर : प्रार्थना ईश्वर से बातचीत करने का एक प्रभावी तरीका है। प्रार्थना निम्नांकित किसी एक के लिए की जा सकती है–

ईश्वर की प्रशंसा और उसकी महानता या भौतिक वस्तुओं की कृपा पाना, जैसे नौकरी, पुत्र या धन इत्यादि पाना या आध्यात्मिक लाभ जैसे भक्ति प्राप्त करना, वासना इत्यादि जैसे बुरे संस्कारों का विनाश करना। यहाँ फिर, हर कोई वेद, बाइबिल, पुराण या स्तोत्र जो महान संतों जैसे आदि शंकर, वेदान्त देशिक, बाल्मीकि आदि द्वारा रचित हैं का पाठ कर सकता है या ईश्वर से अपने परिवार की समस्याओं, दैनिक जिन्दगी, कार्यालय या साधना और अन्य आध्यात्मिक पहलुओं पर स्वच्छन्द रूप में बात कर सकता है।

श्री रामकृष्ण परमहंस, परमहंस योगानन्द आदि प्रत्येक दिन ईश्वर से बात करते थे। "लैटर्स फ्रोम ब्रदर लारेन्स" या "प्रेक्टिसिंग द प्रजेन्स ऑफ गॉड" आदि पुस्तकें स्वामी विवेकानन्द के द्वारा हमेशा प्रस्तावित की जाती थीं।

प्रार्थना को एक अलग साधना के रूप में किया जा सकता है लेकिन यदि इसे जप के साथ किया जाता है, तो नाम स्मरण और स्वाध्याय (धार्मिक ग्रंथों और इससे संबंधित पुस्तकों का अध्ययन) ज्यादा प्रभावशाली होगा।

मौलिक संस्कार से जो ज्यादा भावुक हैं और जो अपने आप को जप या साधना में बैठने में असमर्थ पाते हैं वे अपने चित्त को भगवान में लगाने के लिए प्रार्थनाओं को सहज, सरल पाएंगे और इससे एकाग्रता भी विकसित होगी।

प्रश्न 13. साधना या जप के दौरान, मेरा चित्त एक क्षण भी स्थिर नहीं रहता है। बहुत बार जब मैं अपना चित्त ईश्वर की ओर लगाता हूँ और एकाग्र करता हूँ, तो यह फिसल जाता है और बहुत से सांसारिक मामलों से संबंधित विचारों में लीन हो जाता है। हमें अपने चित्त को स्थिर रखने के लिए क्या करना चाहिए जिससे कि हम ईश्वर पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकें ?

उत्तर : यह एक समस्या है जो कि 99% साधकों (भक्तों) में सामान्य है। भगवद् गीता में भी, यह प्रश्न अर्जुन के द्वारा श्रीकृष्ण से किया गया है। अनेक जन्मों से हम लोगों में से अधिकतर सांसारिक मामलों में संलग्न हैं, जैसे कि पारिवारिक जिन्दगी चलाने में, पेशा या व्यवसाय, सामाजिक जिन्दगी, राजनीति इत्यादि)। इस जिन्दगी में भी, आध्यात्मिक मार्ग की जानकारी के बाद भी, दिन के 24 घंटों में, यहाँ तक कि अवकाश प्राप्त लोग भी ईश्वर के लिए मात्र 1 से 2 घंटे देते हैं, जबकि शेष

समय टेलीविजन देखने में, स्वयं तथा परिवार के स्वास्थ्य की देखभाल करने में, सामाजिक कार्यक्रमों के भाग लेने में, समाचार पत्रों को पढ़ने में, खेल, राजनीति तथा क्लब इत्यादि जाने में व्यतीत करते हैं। जब हमारी पूरी जिन्दगी इन सांसारिक मामलों में व्यस्त है तो यह स्वाभाविक है कि जब आप चिन्तन के लिए बैठते हैं तो चित्त सांसारिक मसलों के चारों ओर घूमने में ही लगा रहता है।

गीता के अनुसार, "उन लोगों का चित्त जो कि लगातार कार्यकलापों और धन तथा वैभव की खुशियाँ लेने में लिप्त हैं कभी भी शांत या निश्चल नहीं रह सकता है।"

भगवान कृष्ण के अनुसार, चित्त को नियंत्रित करने का एक ही तरीका है "लगातार अभ्यास" और "वैराग्य", जैसे कि सभी सांसारिक वस्तुओं से अलगाव। इसका कोई सुगम मार्ग नहीं है। हमें पूर्णरूप से अटल प्रेम का विकास करना है और ईश्वर के प्रति भक्ति विकसित करनी है (इसके लिए हमें ईश्वर की लगातार प्रार्थना करनी होगी) और पूर्ण उदासीनता और रुचि की कमी या अनासक्ति विकसित करनी होगी सभी सांसारिक वस्तुओं के प्रति जैसे धन का संचय, नाम और प्रतिष्ठा, पत्नी, बच्चे तथा परिवार के प्रति आसक्ति, वासना में लिप्त रहना, खेल–कूद, राजनीतिक मामलों, सामाजिक गतिविधियों इत्यादि में रुचि रखना आदि। दूसरी बात, चाहे चित्त एकाग्र हो या नहीं, तब भी साधना या जप करना नहीं छोड़ना चाहिए। किसी भी समय चित्त भटकने लगता है, तो हमें इसे जप, ईश्वर इत्यादि की ओर धैर्यपूर्वक लाना चाहिए। सफल होने में वर्षों या जन्मों लग सकते हैं लेकिन हमें इस रास्ते पर बिना रुके हुए चलना चाहिए। एक दिन ईश्वर की कृपा होगी और परिणामस्वरूप समाधि लगेगी जिससे कि अंततः ईश्वर की प्राप्ति होगी।

प्रश्न 14. यद्यपि मैंने गुरु से दीक्षा ली है और जप, साधना और वैराग्य का अभ्यास कर रहा हूँ, लेकिन फिर भी मैं लगातार लैंगिक विचारों, वासनाओं तथा लोभ के वशीभूत हो जाता हूँ। कभी मैं वासनाओं में लिप्त होता हूँ तो कभी मैं युवतियों की संगति पसंद करता हूँ। मैं इससे कैसे निजात पा सकता हूँ ?

उत्तर : काम वासना या वासनाओं की आसक्ति को शांत करना बहुत ही कठिन है और यहाँ तक कि साधु और महात्मा भी अपनी साधना के दिनों में इसके शिकार होते रहे हैं। यह ईश्वर और गुरु की ही कृपा है जिससे इस वासना को पूर्ण रूप से समाप्त किया जा सकता है। निम्न तरीकों का उपयोग किया जा सकता है–

(1) जप और साधना बढ़ाना।

(2) नित्य दिन अकेले में ईश्वर के सामने रोओ और उनकी कृपा पाने के लिए सच्चे मन से उनकी प्रार्थना कीजिए।

(3) काम वासना से संबंधित सभी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, उपन्यास और उत्तेजक कहानियों को पढ़ने से दूर रहें।

(4) कामुक बातचीत में शामिल रहने वाले लोगों की संगति से दूर रहें।

(5) जब आप अकेले हों तब भिन्न लिंगी लोगों की संगति छोड़ दें। यदि वे ईश्वर के अच्छे भक्त हैं तथा साधना भी कर रहे हैं तो भी कोई बात बोलकर किसी बहाने से ऐसी संगति से निकल जाएँ।

(6) सत्संग में जाने की कोशिश करें, भजन में भाग लें तथा धार्मिक लोगों की संगति में जाएँ जो इसमें पूर्णतया लगे हुए हैं।

(7) अपने गुरु से बातचीत करें (यदि वे एक परिपक्व और विकसित आत्मा हैं) और उनमें से कुछ आपकी विशेष मंत्र से मदद कर सकते हैं या ऐसे एक बीजाक्षर (एक वर्ण) से जो इस वासना के लिए शास्त्रों में विहित है। (उदाहरणार्थ "क्लीं")

(8) पुराने और नए संतों जैसे तुकाराम, ज्ञानेश्वर, पुरन्दरदास, नामदेव, रामकृष्ण परमहंस, भगवान रमण इत्यादि की आत्मकथाओं और जीवनियों को नित्यदिन पढ़ें।

(9) बहुत लोग यह सलाह देते हैं कि भिन्न लिंगी को परिस्थिति अनुसार अपनी माँ या पिता की दृष्टि से देखना चाहिए। व्यवहार में, बहुत मामलों में यह सैद्धान्तिक सलाह असफल हो जाती है। वासना से मुक्ति पाने के लिए लगातार और नित्य प्रति ईश्वर की प्रार्थना करना सबसे अच्छा मार्ग है लेकिन इसे ऊपर दिए गए विचारों के साथ समायोजित करके किया जाना चाहिए।

(10) कुछ के अनुसार, ललिता सहस्र स्तोत्र और विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र को नित्यप्रति पढ़ना भी (अगर संभव हो) अत्यधिक लाभदायक पाया गया है।

(11) शीघ्रातिशीघ्र कामुक विचारों के शांत हो जाने पर शांतिपूर्वक बैठें और देखें कि तुम्हारा चित्त कामुक विचारों से पूर्ण रूप से व्यस्त था। प्रत्येक दिन कुछ समय तक इन तथ्यों की ओर देखें बिना किसी आलोचना या निर्णय के कि यह कितना गलत था। हर समय के बाद यदि इसे लगातार किया जाता है, तो यह विधि अधिक प्रभावशाली साबित होगी।

प्रश्न 15. प्रारब्ध क्या है या पूर्व जन्म में किए हुए कार्यों के फलस्वरूप भाग्य क्या है? क्या हमारी पूरी जिन्दगी जिसमें ईश्वर अनुभूति भी शामिल है पूर्व निश्चित है? स्वयं के प्रयत्न और स्वतंत्र इच्छा से क्या हो सकता है? प्रारब्ध वासना (पिछली दबी हुई कामनाएँ) से किस प्रकार अलग है?

उत्तर : वैज्ञानिक तौर पर, प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होनी चाहिए (न्यूटन के तीसरे गति संबंधित 3rd Law of Motion नियम) इसी तरह, यदि हम इस जन्म

में कोई गलत कार्य करते हैं तो, हम इससे बच नहीं सकते। पूर्व जन्म के गलत कार्यों की सजा या पूर्व जन्म के अच्छे कार्यों का पुरस्कार ईश्वर के द्वारा अगले जन्म में दिया जाएगा और हमें उसका अनुभव करना है। रोग, कैंसर, संताप, धन या प्रतिष्ठा की क्षति, जुदाई इत्यादि की सजा हमें दुख पहुँचाती है जबकि धनी परिवार में जन्म लेना, सुनहरा भाग्य पाना इत्यादि के रूप में पुरस्कार हमें खुशी पहुँचाते है। पूर्व जन्म के कार्यों के परिणाम की इस विधि को प्रारब्ध कहते हैं और इसे नकारा नहीं जा सकता है हालाँकि इसकी तीव्रता को प्रार्थना, महात्मा की कृपा इत्यादि से कम किया जा सकता है। प्रत्येक जिन्दगी का कुछ भाग जो घटनाओं और संयोग के रूप में आता है निश्चित होता है। बचे हुए भाग के मामले में, ताजे और नए कार्यों को किया जाता है (सैद्धांतिक तौर पर स्वतंत्र इच्छा से) जो नए जन्म के लिए प्रारब्ध बन जाता है और इसी प्रकार लगातार जन्म और मृत्यु की शृंखलाएँ चलती रहती हैं।

प्रारब्ध या भाग्य के रूप में जो प्रतिक्रिया होती है, इसके अलावा प्रत्येक क्रिया का दूसरा प्रभाव भी पड़ता है। प्रत्येक कार्य (जैसे मंदिरों में जाना, दूसरों के पैसे चुराना, घुड़सवारी की होड़ या जुआघर जाना) हमारे मस्तिष्क की चेतना पर अपना प्रभाव छोड़ता है। यह स्थिति वासना की स्थिति कहलाती है। यह प्रभाव फिर से इस कार्य को दुहराने की प्रवृत्ति उत्पन्न करता है और इस प्रकार हमारे कार्यों को प्रभावित करने की कोशिश करता है। जब किसी कार्य को बार–बार दुहराया जाता है (जैसे ईश्वर की प्रार्थना करना) तो वह विशेष वासना अधिक दृढ़ हो जाती है। मन वासनाओं से दबकर सूक्ष्म शरीर से अगले जन्म के शरीर में चला जाता है (और यहाँ तक कि कई जन्मों में भी)। जब हम कोई विशेष कार्य करने की बात सोचते हैं, तो बहुत सारी वासनाएँ हमारे दिमाग को प्रभावित करती हैं कि इसे किया जाए या नहीं किया जाए या कोई वैकल्पिक कार्य किया जाए। वासनाओं के बीच संघर्ष होगा और दृढ़ वासना का प्रभाव और ज्यादा गहरा होगा। हम उसी वासना के अनुसार कार्य करेंगे। वासना खराब हो सकती है जैसे– लोभ, गुस्सा, लालच, हत्या करने की इच्छा या चोरी करने की इच्छा इत्यादि या वासना अच्छी भी हो सकती है जैसे दूसरों की मदद करना, क्षमा करना, कल्याण करना इत्यादि। इन वासनाओं के वशीभूत होने पर अपने कारण और ज्ञान के उपयोग के बिना हम कमजोर हो जाते हैं। इसलिए यदि हमारी स्वतंत्र इच्छा भी है तो भी हम इसका उपयोग नहीं कर पाते हैं और इन वासनाओं के शिकार हो जाते हैं। वासनाएँ तो केवल उकसाती हैं और सैद्धांतिक तौर पर वासनाओं की सलाह की उपेक्षा करके हम अपनी स्वतंत्र इच्छाओं का उपयोग कर सकते हैं। हम राज्यों के उन गवर्नरों की तरह हैं जो अपनी कमजोरियों के कारण अपने सलाहकारों द्वारा निर्देशित होते हैं और अपनी स्वतंत्र इच्छाओं को फलीभूत नहीं कर पाते हैं। इन वासनाओं को दूर किया जा

सकता है। प्रारब्ध निश्चित है किन्तु वासनाओं को खत्म किया जा सकता है और स्व प्रयत्नों के द्वारा आध्यात्मिक मार्ग पर चला जा सकता है। एक अभिनेता का अभिनय और वार्तालाप प्रत्येक नाटक या सिनेमा में कहानी की पटकथा के अनुसार निश्चित रहता है लेकिन जब पटकथा के अनुसार वह स्टेज पर अभिनय करता है तो उसे पूरी स्वतंत्रता होती है कि वह अपने घर, पत्नी और बच्चे के बारे में कैसे सोचे। इसी तरह, यद्यपि हमारे जीवन के कार्यकलाप वासना के अनुसार पूर्व निबद्ध होते हैं, कोई भी हमारे मन को ईश्वर पर स्थिर करने से, ईश्वर के ऊपर ध्यान लगाने और उसकी प्रार्थना करने से नहीं रोक सकता है। इसमें हमारे स्वयं के थोड़े से ही प्रयत्न की जरूरत होती है जिससे ईश्वर के ऊपर हमारे मन को केन्द्रित करें।

प्रश्न 16. हम बुरी वासनाओं को किस प्रकार दूर कर सकते हैं ?

उत्तर : सिद्धान्ततः हम अच्छी वासनाओं को अपनाकर बुरी वासनाओं से दूर रह सकते हैं परन्तु यह प्रायः असम्भव होता है।

गुरु की कृपा से बुरी वासनाओं को हटाया जा सकता है। इसी प्रकार ईश्वर की प्रार्थनाएँ भी उतनी ही प्रभावशाली होती हैं।

हर बार बुरी वासना बुरे कर्म के लिए मस्तिष्क को प्रेरित करती है, जैसे ताश खेलना, जुआ खेलना या किसी से लड़ना। ऐसे किसी भी कार्य को टाल कर या फिर कभी करेंगे सोच कर कुछ अन्य अच्छा कार्य करने का प्रयत्न करना चाहिए। अंत में सारी कोशिशों के बावजूद भी तुम अपनी वासनाओं के समक्ष झुक सकते हो। यदि हर बार तुम अपनी बुरी वासनाओं से लड़ते रहे तो बार–बार असफल होते हुए भी तुम्हारी स्वतंत्र इच्छा शक्ति शनैः शनैः दृढ़ होती जाएगी और एक दिन आएगा जब तुम अपनी वासनाओं पर नियंत्रण करके अपनी स्वतंत्र इच्छा शक्ति का पालन कर सकोगे।

कभी–कभी उपवास रखना, सप्ताह में एक दिन या कुछ घंटों के लिए मौन धारण करना और प्राणायाम करना बहुत सहायक होता है। वासनाओं के प्रति समर्पित होकर तुरन्त उन पर दृष्टिपात करने का तरीका बिना मूल्यांकन या आलोचना के जैसा कि प्रश्न 14 के उत्तर में 11वें तरीके से काम वासनाओं पर निग्रह करना बताया गया है, इस संदर्भ में भी सही है।

प्रश्न 17. हम यह कैसे जानें कि हमें आत्मानुभूति या ईश्वर की प्राप्ति हो गई है ?

उत्तर : "मैं यह शरीर हूँ", इस भाव से अपने आप को शरीर के साथ ऐक्य करने को अहम् या अहंकार कहा जाता है। ऐसा व्यक्ति जिसे आत्मानुभूति हो गई है उसका अहम् शेष नहीं रहता क्योंकि वह सर्वोत्तम ब्रह्म में लीन हो चुका होता है। उसे शारीरिक अनुभूति नहीं होती जबकि देखने वाले उसे एक शरीर के रूप में देखते

हैं। चूँकि आत्मा स्वयं प्रकाशवान, सदैव नित्य मुक्त और नित्य प्रबुद्ध है तो जिसने आत्मानुभूति कर ली है और जो अपने शरीर में आसक्त नहीं है, उसके मन में यह विचार कभी नहीं उठेगा कि उसे आत्मानुभूति हुई है या नहीं। ऐसे विचार केवल उसी के मन में उठते हैं जो अज्ञानी है। जो कोई भी यह सोचता है कि उसे आत्मानुभूति हो गई है वह कभी आत्मज्ञानी नहीं हो सकता। बहुत से साधक साधना के विभिन्न स्तरों पर भ्रमित हो जाते हैं कि उन्हें आत्मनुभूति हो गई है और वे दूसरों को भी भ्रमित करते हैं। यदि आप अँधेरे में रस्सी को साँप समझ लो और बाद में उसे रस्सी के रूप में पाओ जैसे कि उसने अपना असली स्वरूप प्राप्त कर लिया हो तो रस्सी, आप की बात पर हँसेगी और जोर से कहेगी कि कैसी बातें करते हो ? मैं तो हमेशा ही रस्सी रही हूँ। आत्मानुभूति कैसी ? अतः अनिश्चित काल तक साधना करते रहो, यहाँ तक कि शरीर की अनुभूति पूर्णतया लुप्त हो जाए और आत्मबोध के रूप में आत्मा अभिव्यक्त हो जाए।

प्रश्न 18. "अहम्" या "मैं" क्या है ? और इससे हमें क्या हानि पहुँचती है ? इसे किस प्रकार दूर किया जा सकता है।

उत्तर : जब कभी कोई व्यक्ति कहता है, "मैंने दोपहर का भोजन कर लिया है" अथवा "मैंने प्रवचन किया था" तो वह अपने शरीर और मन के तंत्र से तादात्म्य स्थापित करता है। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति दो प्रतिकूल लक्षणों से बना है– एक तो आत्मा या अनासक्त स्व जो अपरिवर्तनीय और अजर, अमर है और दूसरा शरीर जो जन्म लेता है और उसमें भी बदलाव होते रहते हैं। जबकि शरीर तो भिन्न–भिन्न है, आत्मा एक ही है और समस्त प्राणियों में व्याप्त है। शरीर से गलत तादात्म्य के कारण, खुशियाँ, दुःख, रोग, जन्म, मृत्यु और अन्य परिवर्तन भी स्व पर आरोपित हो जाते हैं जो समस्त दुःखों और कष्टों का कारण है। व्यक्ति यह सोचने लगता है कि समस्त कार्यों का वही कर्ता है और उसे ही उनका परिणाम भुगतना है चाहे अच्छा या बुरा, आनंद या पीड़ा। किसी कारखाने में जहाँ विभिन्न मशीनें हैं एक बिजली ही है जो सारी मशीनों को उनके अपने कार्यों को करने के लिए चलाती है और मशीनों को यह अधिकार नहीं है कि वे स्वयं को कर्ता मान लें।

इसके अतिरिक्त, जब एक आत्मा भिन्न–भिन्न शरीरों में व्यक्त होती हुई स्वयं को शरीर से आत्मसात् कर लेती है तो वह हर शरीर और वस्तु को अपने से भिन्न समझने लगती है जिसका परिणाम होता है यह अच्छा है, वह बुरा है, यह मित्र है, वह शत्रु है और फलस्वरूप मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं।

यदि एक बार हम यह अनुभव कर लें कि हम कर्ता नहीं है और यह तो एक ईश्वर है या आत्मा है जो सब को सक्रिय कर रही है, तो फिर हमें कार्यों के परिणामों से क्या लेना, देना। तब इन कार्यों का पुण्य या पाप हमें नहीं लगेगा। फिर नाराजगी

या नापसंदगी, मोह या आसक्ति और दूसरों से कोई विवाद भी नहीं होगा। यह तो ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण की दशा है जहाँ अहम् नष्ट हो जाता है।

महर्षि रमण के कथनानुसार– लगातार स्व–निरीक्षण "मैं कौन हूँ" करने से अहम् पूर्णरूपेण नष्ट हो जाता है।

प्रश्न 19. बौद्धों के मतानुसार अन्ततोगत्वा, ना तो स्वयंभाव है, ना आत्मा ना ईश्वर, यह तो सब शून्य है। हम इसे क्यों स्वीकार नहीं करते ?

उत्तर : इस बात का समर्थन तो केवल वही कर सकते हैं जिन्होंने इसे अनुभव किया है कि ईश्वर है या नहीं या केवल शून्य है। कोई नहीं कह सकता कि मैंने देखा है– सब कुछ शून्य है क्योंकि जब तक एक द्रष्टा का अस्तित्व है तब तक शून्य कैसे हो सकता है। द्रष्टा का अस्तित्व था। एक गवाह ने एक बार कोर्ट में एक जज से कहा कि हत्या के समय उस कमरे में कोई मौजूद नहीं था। जज ने तुरन्त प्रश्न दागा, "तुम कैसे जानते हो कि वहाँ कोई नहीं था जब तक तुम स्वयं वहाँ न थे।" यहाँ भी यही तथ्य उजागर है। इस पर भी ऐसे कितने ही हिन्दू और ईसाई संत हैं जिन्होंने ईश्वर या आत्मा का निजी अनुभव किया है। इस प्रकार के कितने ही उदाहरण धर्म ग्रंथों में और कितनी ही अन्य पुस्तकों में भरे पड़े हैं। रामकृष्ण परमहंस और भगवान रमण हाल के बीते हुए लोगों में से हैं जिन्होंने ईश्वर का अनुभव किया है।

कहा जाता है कि बुद्ध ने कुछ भी कहने से इंकार कर दिया था जब उनसे विशेष रूप से पूछा गया था कि आत्मा या ईश्वर का अस्तित्व है या नहीं। यह किसी के कहने भर से मान लेने की बात नहीं है, बल्कि साधना के पश्चात् किसी के स्वयं अनुभव के बाद इसे स्वीकारा जा सकता है।

हमारे शास्त्रों जैसे "देवी कलोत्तरम" में शून्य या महाशून्य का उल्लेख है। वह तो केवल जागृति के विशेष उच्च स्तर को इंगित करता है जहाँ समस्त संसार की हमारी परिचित समस्त वस्तुओं का अस्तित्व समाप्त हो जाता है जिसे शून्य कहा गया है।

प्रश्न 20. कुछ लोग कहते हैं कि भगवद्गीता, उपनिषद, गुरुवाणी, आदि को केवल मात्र पढ़ने या पाठ करने से कोई लाभ नहीं है जब तक कि हम उसके अर्थ को न समझें और उसे व्यवहार में न लाएँ।

उत्तर : कोई भी साधना जो विश्वास और भक्ति से की जाती है, वह अन्ततोगत्वा हमें ईश्वर से मिला देगी। यह तो श्रद्धा/विश्वास है जो वास्तव में महत्वपूर्ण है। सभी शास्त्रों जैसे श्रीमद् भागवतम्, विष्णु सहस्रनाम स्तोत्रम् आदि में यह स्पष्ट किया गया है कि वे सब जो इसका छोटा सा भी भाग केवल पढ़ते या सुनते हैं उन्हें भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के दोनों क्षेत्रों में अकथनीय लाभों की प्राप्ति होती है। यदि

हम अर्थ भी समझ लें तो निस्संदेह यह ज्यादा असरकारी होगा। चूँकि शब्दों के उच्चारण से उत्पन्न होती हुई ध्वनि कम्पन से जिसका प्रत्येक छोटा भाग भी शक्ति संपूर्ण है, पाठक एवं श्रोतागण उचित समय पर आत्म ज्ञान या जागृति के उच्चतर बिन्दु पर पहुँच जाएंगे। यहाँ तक कि पश्चिम जगत में भी, चर्चों में जन समूह प्रार्थनाएँ लैटिन भाषा में करता था जिसकी बहुतों को समझ नहीं थी और इसी प्रकार भारत में भी अधिकांश पूजाएँ और प्रार्थनाएँ संस्कृत भाषा में की जाती हैं।

पुनश्च जागृति का स्तर और उच्चतर आध्यात्मिक अनुभवों के लिए हमारी योग्यता तभी बढ़ेगी जब हमारे शरीर और मष्तिष्क में सत्व गुण (प्रकाश, समरसता और प्रेम) का प्राधान्य होगा। हमारा शरीर पांच तत्वों से बना है– मिट्टी, जल, अग्नि आदि, जो सभी या तो तमो गुण के हैं या रजो गुण के हैं सिवाय आकाश के जो एक मात्र सत्त्व गुण का है। ठीक जिस प्रकार पृथ्वी में गंध होती है, पानी में स्वाद, अग्नि का आकार होता है, उसी प्रकार आकाश का गुण शब्द (नाद) है। फलतः पवित्र और धार्मिक पाठ की जितनी अधिक आवाज शरीर में समाहित होती है और शरीर द्वारा अवशोषित होती है, उतनी ही अधिक शरीर में सत्व गुण की बढ़ोतरी होती है। जब तक भी इन स्तोत्रों को सुना और पढ़ा जाता है, मस्तिष्क ईश्वरीय विचारों में लीन रहता है, व्यक्ति का उच्चतर स्तर तक विकास होता है। ईश्वर का निरंतर चिंतन ईश्वरीय प्राप्ति की कुंजी है और जो कुछ भी इसमें सहायक है, वह प्रभावी साधना है।

प्रश्न 21. क्या ईश्वर प्राप्ति के लिए परिवार और सांसारिक जीवन का त्याग करना और सन्यासी बनना अत्यंत आवश्यक है ?

उत्तर : पारिवारिक और सांसारिक जीवन में यदि कोई किसी परिपक्व गुरु के निर्देशन में गहन साधना करता है, तो वह निश्चित रूप से आध्यात्मिक विकास के बहुत उच्च स्तर तक पहुँच सकता है। गृहस्थी संतों के ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जैसे– तुकाराम। जरूरी तो यह है कि हम अपने जीवन में अपने सारे काम आसक्ति के बिना करें, नितांत ब्रह्मचर्य निष्ठ रहें और परिवार समेत किसी भी सांसारिक वस्तु के लिए कोई मोहभाव या इच्छाएँ न रखें। पसंद, नापसंदगी से दूर रहें और किसी भी घटना पर कोई प्रतिक्रिया न करें। समस्त प्राणियों को अपने समान समझें। नितांत वैराग्य जरूरी है। ईश्वर के लिए हमारा असीम प्रेम होना चाहिए। जब वैराग्य केवल शिथिल हो और पूर्ण न हो तो परिवार को त्यागना और सांसारिक दूसरे कर्तव्यों से मुँह मोड़ना कभी उचित नहीं हो सकता।

फिर भी आदि शंकर के अनुसार अन्तिम प्रौढ़ अवस्था में औपचारिक सन्यास ग्रहण करना ईश्वर प्राप्ति के लिए आवश्यक है। यहाँ तक कि कैथोलिक ईसाइयों, बौद्धों, सूफियों और जैन आदि का भी दृढ़ विश्वास है कि भिक्षुक बनना और निर्दिष्ट

अनुशासन में साधना करना ईश्वर प्राप्ति, मुक्ति या निर्वाण के लिए अति आवश्यक है। इस प्रौढ़ अवस्था में जब कोई व्यक्ति वैराग्य के उच्चतम स्तर तक पहुँच जाता है, यहाँ तक कि स्वयं अपने शरीर की आवश्यकताओं की भी उपेक्षा करता है तो ईश्वरीय अनुभूति या प्राप्ति के सिवाय उसका कोई दूसरा कर्तव्य नहीं रह जाता।

प्रश्न 22. क्या हम मात्र कर्म द्वारा अर्थात् गरीबों और जरूरतमंद, रोगों से पीड़ित लोगों की सेवा करके, विद्यालय, अस्पताल और मंदिर निर्माण करके, जानवरों की देखभाल करके ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते ?

उत्तर : शास्त्रों में वर्णित है कि मोक्ष (ईश्वर अनुभूति) केवल ज्ञान से प्राप्त हो सकता है। आदि शंकर ने स्पष्टतया घोषित किया है कि चित्त की शुद्धि के लिए कर्म लाभप्रद है किंतु यह ज्ञान होते हुए भी यह आत्मज्ञान प्राप्ति में प्रत्यक्ष साधन नहीं हो सकता। जैसे कि हम सब की अनुभूति है और हमारा अज्ञान ईश्वर की माया से आच्छादित है, केवल सच्चे ज्ञान और प्रत्यक्ष बोध द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति हो सकती है और किसी भी कर्म का इससे संबंध नहीं है। रमण महर्षि ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है और अपनी पुस्तक "उपदेश सारम्" के प्रारम्भ में इन्हीं विचारों को दोहराया है।

ईश्वर अनुभूति की साधना के दो पक्ष हैं। एक पक्ष तो चित्त शुद्धि है और दूसरा पक्ष ईश्वर का आवाहन करना है कि वह मायाजाल हटाकर स्वयं प्रकट हो। ध्यान प्रार्थनाएँ और आत्म निरीक्षण ईश्वर के प्रकट होने में सहायक हैं और इनसे चित्त शुद्धि भी होती है। उन लोगों के लिए जिनमें रजोगुण की प्रचुरता है और जो सक्रिय क्रियाकलापों में लगे रहते हैं जैसे भगवद् गीता में अर्जुन और उन लोगों के लिए भी जिनकी ईश्वर और शास्त्रों में आस्था कम है मानव जाति की सेवा निःस्वार्थ भाव से करना चित्त शुद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक है। तमोगुण से पूरित और आलसी, अलसाए और निंदयाये लोगों को जगाने के लिए भी निःस्वार्थ सेवा करना अच्छा है। जब तक ईश्वर के लिए आसक्ति, आत्मज्ञान की तीव्र इच्छा, सांसारिक पदार्थों के लिए वैराग्य और त्याग की भावना का उदय ना हो तब तक हमें कर्मयोग में लगे रहना चाहिए। परंतु हमें विवेकानंद के शब्द याद रखने चाहिए, "चर्च में जन्म लेना अच्छा है परंतु वहां मरना नहीं"। हमें जानना चाहिए कि हम कर्म योग से बाहर कब निकलें और भक्ति या ज्ञान के पथ पर चलें। आत्म समर्पण या भक्ति स्वयम् ही ज्ञान की ओर उन्मुख करेगी और ज्ञान से भक्ति या आत्म समर्पण होगा। जिसे हम प्यार करते हैं, उसे हम पूर्णरूप से जान जाते हैं। इसी तरह जिसे हम पूर्णरूप से जान जाते हैं, उसे हम प्यार करने लगते हैं।

प्रश्न 23. अनेक साधक दावा करते हैं कि उन्होंने भगवान के दर्शन किए हैं, उन्होंने एक दिव्य प्रकाश, एक नीला मोती देखा है या बाँसुरी, वीणा की

भिन्न-भिन्न आवाज़ें सुनी हैं। क्या वे ईश्वर प्राप्ति के चिह्न है अथवा क्या वे आध्यात्मिक पथ में ठोस उन्नति के संकेत हैं ?

उत्तर : लगातार साधना करने के बाद किसी को ईश्वर के दर्शन, प्रकाश, नाद आदि के अनुभव हो सकते हैं परन्तु कुछ समय के बाद वे भी लुप्त हो सकते हैं। वे सभी हमारी आध्यात्मिक यात्रा के मील के पत्थर हैं। उनसे हमें प्रोत्साहन मिलता है कि हम सही मार्ग पर बढ़ रहे हैं। जिस प्रकार मील का पत्थर हमारे साथ–साथ यात्रा नहीं करता, इसी प्रकार कुछ समय के पश्चात् ये अनुभव लुप्त हो जाते हैं। ईश्वर ही एक मात्र यथार्थ है। अन्य अनुभव जो साधना के दौरान होते हैं, सभी अवास्तविक होते हैं। हमें उनकी उपेक्षा करनी चाहिए और अपनी साधना में लगे रहना चाहिए। यदि हम इस प्रकार के दृश्यों में उलझे रहेंगे, तो हमारी आगे की उन्नति अवरुद्ध हो जाएगी। चूँकि हम यह गणना नहीं कर सकते कि ईश्वर अनुभूति के लिए कितनी साधना जरूरी है, इसलिए हम यह नहीं कह सकते कि इस प्रकार के अनुभव कितने प्रतिशत प्रगति के सूचक हैं। बहुत से अग्रवर्ती साधकों ने ऐसे दृश्य नहीं देखे होंगे या ऐसे अन्य अनुभव अपने संपूर्ण जीवन में नहीं किए होंगे। इसलिए यह अनिवार्य नहीं है कि साधना के किसी भी स्तर पर कोई ऐसे दृश्यों का अवलोकन करे। ऐसे अनुभव विभिन्न कारकों पर निर्भर होते हैं जैसे कि साधना का प्रकार, साधकों की सुप्त इच्छाएँ और उनके पूर्व जन्मों के संस्कार।

प्रश्न 24. कुछ लोग यह दावा करते हैं कि उन्हें ईश्वर से स्वतः प्रेरणा मिली थी और अन्तरतम से ही ईश्वर का आदेश प्राप्त हुआ था। क्या यह सही है ?

उत्तर : केवल चित्त पूर्णतया शुद्ध हो और राग, द्वेष, इच्छाओं और आसक्तियों से दूर हो, तो ईश्वर की आवाज सुनी जा सकती है। जब तक शुद्धीकरण की यह प्रक्रियाएँ पूर्ण न हो जाएँ, ईश्वर से मिली प्रेरणा का दावा स्वीकार योग्य नहीं है। ये कथित प्रेरणात्मक ख्याल या विचार वासनाओं के प्रतिफल हो सकते हैं और कोई भी उन्हें ईश्वर प्रेरित समझकर भ्रम में पड़ सकता है। जब अमेरिका जाने का अवसर विवेकानंद को प्रथम बार मिला तो उन्होंने यह नहीं माना कि ईश्वर ने उन्हें इस काम के लिए चुना है जब तक कि उन्होंने इस बात की तसदीक कई प्रकार से नहीं कर ली और तभी वे आश्वस्त हुए।

प्रश्न 25. क्या इष्ट पदार्थों को साकार करने या चमत्कारी शक्तियों पर अधिकार करने जैसे– चित्त को दिव्य करने, भविष्यवाणी करने, रोगों को दूर करना आदि की सामर्थ्य को सिद्ध आत्मा माना जा सकता है ? हम इन शक्तियों को किस प्रकार विकसित कर सकते हैं ?

उत्तर : कुछ विशेष उपायों जैसे– विभिन्न प्राणायाम, तांत्रिक पथ, कुंडलिनी योग और अन्य योग क्रियाओं से इन रहस्यमयी शक्तियों को विकसित किया जा

सकता है। शास्त्रीय विधि से ध्यान, मनन, चिंतन, प्रार्थनाएँ आदि करके कभी–कभी इन शक्तियों को विकसित किया जा सकता है जैसे कि दूसरों की चित्त शुद्धि, इच्छाओं की तुरंत पूर्ति करना आदि। कुछ साधक भक्तों की इच्छानुसार उन्हें प्रभावित करने हेतु त्राटक और अन्य उपायों जैसे सम्मोहन और वशीकरण जैसे उपायों का अभ्यास करते हैं। शास्त्रों में ऐसी शक्तियाँ प्राप्त करने को आध्यात्मिक प्रगति में बाधक माना गया है। साधकों को सदैव निर्देश दिया जाता है कि वे इस प्रकार के प्रदर्शन में न पड़ें, इनकी उपेक्षा करें और अपनी साधना में लीन रहें। ईश्वर बोध के ये कोई चिह्न नहीं हैं।

हालांकि अपने पूर्व जन्म की साधना के फलस्वरूप कुछ सिद्धों को ऐसी शक्तियाँ प्राप्त हैं। रमण महर्षि जैसी सिद्ध आत्माओं ने यद्यपि इससे इंकार किया है किन्तु उनकी उपस्थिति में चमत्कार घटित हुए हैं जब कुछ सच्चे भक्तों ने उनके पास पहुँचकर अपनी समस्याएँ या प्रार्थनाएँ रखी थी। कुछ महान आत्माओं जैसे जिसस क्राइस्ट, शिरडी के सांई बाबा ने अंधों, लंगड़ों या मुसीबतजदा लोगों की सहायता जान बूझकर ईश्वर में उनकी आस्था उत्पन्न करने के लिए की है। वे अपवाद हैं। ऐसे उदाहरण हैं, जब चमत्कार प्रदर्शन करने वालों के समक्ष जाकर लोग मुसीबत में पड़े हैं। एक साधक के लिए यह विवेकपूर्ण होगा कि वह ऐसी शक्तियों के चक्कर में न पड़े और यदि ऐसी शक्तियाँ आ भी जाएं तो उनकी उपेक्षा कर दे। उन्हें उन लोगों के पास भी नहीं जाना चाहिए जो स्वार्थवश पैसा, नाम, प्रसिद्धि कमाने या फिर काम प्रवृत्तियों के लिए अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करते हैं।

प्रश्न 26. समाधि दशा क्या होती है ? इस अवस्था में कैसे पहुँचें ?

उत्तर : जब कोई उच्चतम आत्मभाव में सरोबार हो जाए तो परम चेतना की अन्तिम दशा समाधि दशा होती है। उस दशा में किसी को अपने शरीर का भान नहीं रहता। समाधियाँ कई तरह की होती हैं किन्तु उनमें मुख्य हैं– (1) सविकल्प समाधि और (2) निर्विकल्प समाधि। पहली में तो व्यक्तिगत ईश्वर के दर्शन होते हैं जबकि दूसरी दशा अभेदित है जहाँ केवल उच्चतम आत्मभाव ही शेष रहता है और व्यक्तित्व लुप्त हो जाता है। ध्यान की दशा में शारीरिक अनुभव बना रहता है जबकि निर्विकल्प समाधि में शरीर की अनुभूति पूर्णतया नष्ट हो जाती है और मन कार्य करना बंद कर देता है। निर्विकल्प समाधि में स्थित होकर और बार–बार उसी स्थिति में रहकर प्राकृत या सहज योग में पहुँचा जाता है जहाँ चलते–फिरते, बातें करते हुए, खाते, पीते और निद्रा में हर समय नितांत ब्रह्म या महान ईश्वर में साधक लीन रहता है। समाधि की दशा में मस्तिष्क शून्य हो जाता है और काम करना बंद कर देता है। यहाँ तक कि वे लोग जो सविकल्प दशा में पहुँच जाते हैं, वे स्वतः ही समय आने पर अंत में निर्विकल्प समाधि में पहुँच जाते हैं।

प्रश्न 27. मैं कैसे जान सकता हूँ कि किसी व्यक्ति ने आत्मबोध प्राप्त कर लिया है ताकि मैं उसे अपना गुरु मान सकूँ ?

उत्तर : चूँकि मुक्त आत्मा के लक्षण शास्त्रों में वर्णित जैसे प्रशंसा और निंदा में एक समान रहना, किसी को भी हानि न पहुँचाना आदि लक्षित गुण हैं, किसी मुक्त आत्मा को चिह्नित करना कठिन कार्य है परन्तु निम्नांकित निर्देशों का लाभ उठाया जा सकता है–

वह किसी भी स्वामित्व में आसक्ति नहीं रखेगा। वह स्वभाविक रूप से नम्र होगा, प्रचार से दूर होगा और रुपया, नाम, प्रसिद्धि प्राप्त करने में नहीं लगेगा, वह व्यक्तिगत क्रिया कलापों में लिप्त नहीं होगा जैसे आश्रमों, मंदिरों का निर्माण कराना, विद्यालय, कालेज चलाना, अस्पताल खोलना, भूमि ग्रहण करना, भवन खरीदना, अगरबत्तियाँ या आयुर्वेदिक दवाइयों का निर्माण करना, पत्रिकाएँ निकालना, टी. वी. पर साक्षात्कार देना आदि। उसे तो रमण महर्षि के समान अधिकतर मौन रहना होगा और यदि उसे बोलना ही है तो रामकृष्ण परमहंस के समान ईश्वर और आध्यात्मिक साधना के अतिरिक्त उसे कुछ नहीं बोलना है। वह किसी की आलोचना नहीं करेगा ना ही वह किसी भी विषय पर वाद–विवाद करेगा। जाति, धर्म, स्तर, धन, शिक्षा आदि के भेदभाव के बिना वह सब को समान दृष्टि से देखेगा। उसे तो ईश्वर और भक्तों से संबंधित पुस्तकों को सुनना अच्छा लगता है। भजन या नामसंकीर्तन (ईश्वर का नाम जपना) प्रिय है।

प्रश्न 28. क्या कैसेट से संगीत या भजन सुनना या स्वयं गायन और नृत्य से ईश्वरीय अनुभूति होती है ?

उत्तर : जब भगवान रमण से यही प्रश्न संगीतकार संत त्यागराज, संत पुरंदरदास, सूरदास, मीरा आदि की ओर संकेत करते हुए किया गया, तब रमण महर्षि ने उत्तर दिया, "उन्होंने वह सब कुछ गाया जो उन्होंने ईश्वर अनुभूति में प्राप्त किया था। उन्हें गायन द्वारा ईश्वर प्राप्ति नहीं हुई थी। उन्हीं के वचनों में– "सन्तों ने गाकर नहीं पाया पर पाकर गाया" शुरू–शुरू में भजन सुनना सहायक हो सकता है, वह भी सांसारिक वस्तुओं में आसक्ति के समान है और किसी का भी ध्यान ईश्वर से हटकर किसी विशेष राग, संगीत या गायक में लग जाएगा। समय के दौरान कैसेट से गाना चल रहा होगा जबकि साधक का ध्यान कहीं अन्यत्र होगा। यदि कोई लगातार ईश्वर में ध्यान रखकर पूर्ण मन से भजन गाए तो शुरू में यह एकाग्रता में सहायक हो सकता है। आखिरकार तो ईश्वर मौन से ही प्राप्त होता है, निस्तब्धता में। "चुप हो जाओ और ईश्वर को जानो।"

प्रश्न 29. भगवान लोगों को पीड़ाएँ, तंगहाली और क्लेश क्यों देता है ?

उत्तर : भगवान किसी को भी पीड़ाएँ नहीं देता। सभी क्लेश और दुःख हमारे

द्वारा ही बने हैं, हमारे ही गत कर्मों के फल हैं। जीवन की सरिता को बहने के लिए दो किनारे तो चाहिए ही जो एक दूसरे के विरुद्ध होंगे– सुख और दुःख। जब कोई गुरु नदी में नाव खे रहा था, तब शिष्य ने उससे यही प्रश्न पूछा था। गुरु ने उसे एक पतवार दिया और नाव चलाने को कहा। नाव केवल चक्कर काटते घूमने लगी और आगे नहीं बढ़ी। तब गुरु ने उससे कहा, "जैसे नाव को चलाने के लिए दो पतवारों की जरुरत है, उसी प्रकार हमें जीवन की नाव को चलाने के लिए सुख और दुःख दोनों ही चाहिए।"

भगवान तक पहुँचने के लिए प्रत्येक दुःख एक सीढ़ी है। आध्यात्मिक कल्याण की उपेक्षा करने वाले सोते हुए व्यक्ति को यह जाग्रत करता है। केवल दुःख में ही बहुत से लोग ईश्वर के विषय में सोचते हैं और उसकी प्रार्थना करना शुरु करते हैं।

प्रश्न 30. आत्म-अनुभूति के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एक साधक को कितना समय लगेगा ?

उत्तर : ऐसा कहीं नहीं लिखा है कि इतने अधिक जाप या इतने अधिक घंटे साधना करने से ईश्वर अनुभूति हो जाएगी। इसके अतिरिक्त हम यह भी नहीं जानते कि पिछले जन्मों में हम कितनी साधना कर चुके हैं। इसलिए हमें असीम धैर्य से स्वयं को ईश्वर के हाथों में सौंप कर किन्तु उत्साह और उमंग पूर्वक अपने लक्ष्य को नजदीक ही मानकर साधना में लीन रहना चाहिए। ईश्वर अनुभूति को प्राप्त करने के लिए ईश्वर की अनुकम्पा ही एक मात्र सहारा है।

चूँकि सारी प्रक्रिया हमारे भीतर एक सूक्ष्म तल पर होती है, किसी के लिए भी इस मार्ग पर अपनी प्रगति का आकलन करना संभव नहीं है। हमें यह दृढ़ विश्वास रख कर चलते जाना है कि प्रत्येक साधना के साथ हम आगे बढ़ रहे हैं।

◆◆◆

अनुवादक :

S. B. GUPTA
Retd. Principal